क्रमनियमितपर्याय

लेखक

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पी-एच.डी., डी-लिट्

प्रकाशक

पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर-302 015

फोन : 0141-2707458, 2705581

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रथम संस्करण :
5 हजार
(17 अप्रैल, 2019 ई.)
महावीर जयन्ती

मूल्य : **5 रुपये**

टाइपसैटिंग :
त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स,
ए-4, बापूनगर, जयपुर

मुद्रक :
रैनवो ऑफसेट प्रिंटर्स
बाईस गोदाम, जयपुर

प्रस्तुत संस्करण की कीमत कम करनेवाले दातारों की सूची

1.	श्रीमती पुष्पलता जैन (जीजीबाई) ध.प. अजितकुमारजी जैन, छिन्दवाड़ा	1100.00
2.	श्रीमती सुनीता जैन, निम्बाहेड़ा	500.00
3.	श्री बसंत शाह, मुम्बई	500.00
4.	श्रीमती ज्योत्सना जैन, अमेरिका	500.00
5.	श्रीमती रीता जैन ध.प. सुनील शास्त्री, प्रतापगढ़	500.00
6.	श्री नाभिराय पदमकुमार जैन भानेकर, वाशिम	500.00
7.	श्री जयकुमार जैन, कोटा	500.00
	कुल राशि	**4,100.00**

प्रकाशकीय

जैनधर्म के निष्णान्त विद्वान् तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की लेखनी से प्रसूत 'क्रमनियमितपर्याय' का प्रकाशन करते हुए संस्था अपने आपको गौरवान्वित अनुभव कर रही है। यहाँ यह स्मरणीय है कि गद्य लेखन में तो आपको महारत हासिल है ही, पद्य लेखन के क्षेत्र में भी आपका कोई सानी नहीं है। 'पश्चाताप' खण्ड काव्य तथा 'वैराग्य' जैसे महाकाव्यों की रचना के उपरान्त दिगम्बर जैन समाज के सर्वमान्य आचार्य कुन्दकुन्द प्रणीत पंचपरमागमों पर समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड़ तथा पंचास्तिकाय महामण्डल विधान की रचना के उपरान्त योगसार व द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान की रचना कर आपने सभी को हत्प्रभ कर दिया है।

पिछले कुछ दिनों आप काफी अस्वस्थ्य रहे, परन्तु आपका चिन्तन नहीं रुका। पंचपरमेष्ठियों का स्मरण सदा आपके चिन्तन में रहा। यही कारण है कि जैसे ही आपके हाथ में कलम उठाने की शक्ति आई आप तत्काल 'श्रमण शतक' और 'तत्त्वचिन्तन' की रचना करने बैठ गए और १५ दिन के अन्तराल में दोनों कृतियों को पूरा करके ही दम लिया। इन दोनों कृतियों के प्रकाशन के उपरान्त समयसार गाथा-३०८ से ३११ तक की आचार्य अमृतचन्द्र टीका में वर्णित ''**जीवो हि तावत्क्रमनियमितात्म-परिणामैरुत्पद्यमानो जीव एव, नाजीवः**... प्रथम तो यह जीव क्रमनियमित अपने परिणामों से उत्पन्न होता हुआ जीव ही है, अजीव नहीं'' इस पंक्ति से इतने प्रभावित हुए कि आपने इस कृति का प्रतिपाद्य विषय ही क्रमनियमितपर्याय को बनाया; परिणामतः यह कृति 'क्रमनियमितपर्याय' आपके समक्ष प्रस्तुत है। यह तीनों कृतियाँ हैं तो लघुकाय परन्तु इनने गागर में सागर भर दिया है। श्रमणों के स्वरूप, तत्त्वचिन्तन और क्रमनियमितपर्याय इन तीनों कृतियों में आपने जो कुछ भी लिखा, अद्भुत है और 'सतसैया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर, देखत में छोटे लगें घाव करें गंभीर' कहावत को चरितार्थ करते प्रतीत हो रहे हैं।

आपके उक्त कार्य में पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील तथा अच्युतकान्त शास्त्री का भी महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है। सुन्दर टाईप सैटिंग के लिए श्री कैलाशचन्द शर्मा तथा आकर्षक मुखपृष्ठ और प्रकाशन के लिए श्री अखिल बंसल के सहयोग हेतु आप सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

क्रमनियमितपर्याय के हार्द को समझकर आप सभी तत्त्व के सच्चे स्वरूप का चिन्तन-मनन कर मोक्षमार्ग प्रशस्त करें - इसी मंगल भावना के साथ विराम लेता हूँ।

५ अप्रैल २०१९ ई. **- ब्र. यशपाल जैन,** प्रकाशन मंत्री

डॉ. भारिल्ल के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

१. समयसार : ज्ञायकभावप्रबोधिनी टीका	५०.००	५३. युगपुरुष कानजीस्वामी	५.००
२-६. समयसार अनुशीलन भाग १ से ५	१२५.००	५४. वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका	२०.००
७. समयसार का सार	३०.००	५५. योगसार अनुशीलन	२५.००
८. गाथा समयसार	१०.००	५६. योगसार महामण्डल विधान	८.००
९. प्रवचनसार : ज्ञानज्ञेयतत्त्वप्रबोधिनी टीका	५०.००	५७. द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान	७.००
१०-१२. प्रवचनसार अनुशीलन भाग १ से ३	९५.००	५८. मैं कौन हूँ	११.००
१३. कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन	२०.००	५९. रहस्य : रहस्यपूर्ण चिट्ठी का	१०.००
१४. प्रवचनसार का सार	३०.००	६०. निमित्तोपादान	८.००
१५. नियमसार : आत्मप्रबोधिनी टीका	५०.००	६१. अहिंसा : महावीर की दृष्टि में	५.००
१६-१७. नियमसार अनुशीलन भाग १ से ३	७०.००	६२. मैं स्वयं भगवान हूँ	५.००
१८. छहढाला का सार	१५.००	६३-६४. ध्यान का स्वरूप/रीति-नीति	४.००
१९. मोक्षमार्गप्रकाशक का सार	३०.००	६५. शाकाहार	५.००
२०. वैराग्य महाकाव्य	२५.००	६६. भगवान ऋषभदेव	४.००
२१. समयसार महामण्डल विधान	२५.००	६७. तीर्थंकर भगवान महावीर	३.००
२२. समयसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	३५.००	६८. चैतन्य चमत्कार	४.००
२३. प्रवचनसार महामण्डल विधान	२०.००	६९. गोली का जवाब गाली से भी नहीं	२.००
२४. प्रवचनसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	२०.००	७०. गोम्मटेश्वर बाहुबली	२.००
२५. नियमसार महामण्डल विधान	२५.००	७१. वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर	२.००
२६. नियमसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	३०.००	७२. अनेकान्त और स्याद्वाद	३.००
२७. अष्टपाहुड़ महामण्डल विधान	२५.००	७३. शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखर	६.००
२८.दर्शन-सूत्र-चारित्रपाहुड़ मण्डल विधान	१०.००	७४. बिन्दु में सिन्धु	२.५०
२९. बढ़ते कदम	१०.००	७५. जिनवरस्य नयचक्रम	१०.००
३०. ४७ शक्तियाँ और ४७ नय	१५.००	७६. पश्चात्ताप खण्डकाव्य	१०.००
३१. पंडित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व	२०.००	७७. बारह भावना एवं जिनेन्द्र वंदना	२.००
३२. परमभावप्रकाशक नयचक्र	४०.००	७८. कुंदकुंदशतक पद्यानुवाद	२.५०
३३. चिन्तन की गहराइयाँ	३०.००	७९. शुद्धात्मशतक पद्यानुवाद	१.००
३४. तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ	२५.००	८०. समयसार पद्यानुवाद	३.००
३५. धर्म के दशलक्षण	२०.००	८१. योगसार पद्यानुवाद	१.००
३६. क्रमबद्धपर्याय	२०.००	८२. समयसार कलश पद्यानुवाद	३.००
३७. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (पूर्वार्द्ध)	२०.००	८३. प्रवचनसार पद्यानुवाद	३.००
३८. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (उत्तरार्द्ध)	१०.००	८४. द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद	१.००
३९. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (सम्पूर्ण)	३०.००	८५. अष्टपाहुड़ पद्यानुवाद	३.००
४०. बिखरे मोती	१६.००	८६. नियमसार पद्यानुवाद	२.५०
४१. सत्य की खोज	२५.००	८७. नियमसार कलश पद्यानुवाद	५.००
४२. अध्यात्म नवनीत	१५.००	८८. सिद्धभक्ति	१०.००
४३. आप कुछ भी कहो	१५.००	८९. अर्चना जेबी	१.५०
४४. आत्मा ही है शरण	१५.००	९०. कुंदकुंदशतक (अर्थ सहित)	५.००
४५. मुक्ति-सुधा	१८.००	९१. शुद्धात्मशतक (अर्थ सहित)	५.००
४६. बारह भावना : एक अनुशीलन	१६.००	९२-९३. बालबोध पाठमाला भाग २ से ३	८.००
४७. दृष्टि का विषय	१०.००	९४-९५. वीतराग विज्ञान पाठमाला १ से ३	१५.००
४८. गागर में सागर	७.००	९६-९७. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १ से २	१२.००
४९. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव	१२.००	९८. भगवान महावीर और उनकी जन्मभूमि	३.००
५०. णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन	१५.००	९९. समाधिमरण या सल्लेखना	५.००
५१. रक्षाबन्धन और दीपावली	५.००	१००. ये हैं मेरी नारियाँ	५.००
५२. आचार्य कुंदकुंद और उनके पंचपरमागम	५.००	१०१. तत्त्वचिन्तन	६.००
		१०२. श्रमण शतक	४.००

डॉ. भारिल्ल पर प्रकाशित साहित्य

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनंदन ग्रंथ)	१५०.००
२. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल : व्यक्तित्व और कृर्तत्व - डॉ. महावीरप्रसाद जैन	३०.००
३. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथा साहित्य ह्न अरुणकुमार जैन	१२.००
४. डॉ. भारिल्ल के साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन - अखिल जैन बंसल	२५.००
५. गुरु की दृष्टि में शिष्य	५.००
६. मनीषियों की दृष्टि में : डॉ. भारिल्ल	५.००
७. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन ह्न सीमा जैन	२५.००

प्रकाशनाधीन

१. शिक्षाशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के शैक्षिक विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन ह्न नीतू चौधरी
२. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व ह्न शिखरचन्द जैन
३. धर्म के दशलक्षण एक अनुशीलन ह्न ममता गुप्ता

क्रमनियमितपर्याय

(दोहा)

सत्स्वरूप चैतन्यमय परमानन्द अनूप।
समयसारमय आत्मा मैं ही हूँ निजरूप।। १।।

(वीर)

स्वयं सिद्ध सर्वज्ञ स्वभावी परमातम का अभिनन्दन।
अज अनादिमध्यान्त आतमा का कर कोटि-कोटि वंदन।।
वीतराग-सर्वज्ञ हितंकर अरहंतों का सिद्धों का।
वंदन-अभिनन्दन करते हैं सभी संत भगवन्तों का।। २।।

अपने-अपने इष्टदेव को सभी मानते हैं सर्वज्ञ।
अपने-अपने गुरुजनों को सभी मानते हैं मर्मज्ञ।।
दिव्यध्वनि अनुसार रचित जो शास्त्र वही जिनवाणी है।
इनके ही मंगलप्रसाद से अपनी बात बनानी है।। ३।।

देव-शास्त्र-गुरु के प्रसाद से द्रव्य और पर्यायमयी।
वस्तु का स्वरूप जो जाना जाता है आनन्दमयी।।
यथायोग्य वन्दन अभिनन्दन करके आदर करता हूँ।
जैसा जो कुछ जाना मैंने उसकी चर्चा करता हूँ।। ४।।

स्वयं सिद्ध जो सभी द्रव्य हैं वे अनादि से हैं जैसे।
अनन्तकाल तक सदा रहेंगे स्वतः स्वयं वे सब वैसे।।
जीव रहेंगे जीव सदा ही वे जड़रूप नहीं होंगे।
जड़ भी जड़ ही सदा रहेंगे चेतनरूप नहीं होंगे।। ५।।

द्रव्यरूप से यह निश्चित है इसमें कुछ अदला-बदली।
कभी नहीं हो सकती एवं कभी नहीं होती भाई।।
यह त्रैकालिक परम सत्य है इसे सभी स्वीकार करो।
यह त्रैकालिक परम धरम है इससे न इन्कार करो।। ६।।

जैसे द्रव्य द्रव्यरूप से कभी न बदले बात अटल।
वैसे वह पर्यायरूप से नित बदले प्रतिपल पल-पल।।
जैसे द्रव्य अपरिणामी है वैसे ही परिणामी है।
द्रव्यरूप से कभी न बदले पर पर्याय बदलती है।। ७।।

नहीं बदलकर नित्य बदलना यह स्वभाव की खूबी है।
नित्य बदलकर नहीं बदलना यह भी बात बखूबी है।।
वस्तु नित्य है अर अनित्य है नित्यानित्य जरूरी है।
स्याद्वाद की अद्भुत महिमा जिनशासन की खूबी है।। ८।।

पर्यायों के परिवर्तन की अद्भुत कथा निराली है।
जिसे समझकर भवि जीवों की आँखें खुलने वाली हैं।।
सभी द्रव्य परिणमें नित्य अपने क्रमनियमित भावों में।[१]
क्रमनियमित पर्यायों में अर अपने-अपने भावों में।। ९।।

पर्यायें क्रमनियमित हैं – इस महासत्य का उद्घाटन।
एक पंक्ति[२] से हो जाता मिल जाता हमें मार्गदर्शन।।
आत्मख्याति की इस पंक्ति पर बार-बार बलि जाऊँ मैं।
अमृतचन्द्राचार्यदेव के चरणों में झुक जाऊँ मैं।। १०।।

१. आचार्य अमृतचन्द्र : आत्मख्याति ३०८ से ३११ गाथाओं की टीका
२. जीवो हि तावत्क्रमनियमितात्मपरिणामैरुत्पद्यमानो जीव एव, नाजीवः।

एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता कभी नहीं होता।
एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का उत्पादक भी नहीं होता।।
सभी द्रव्य अपनी क्रमनियमित पर्यायों के कर्त्ता हैं।
फेरफार कर सके नहीं पर उत्पादक हैं कर्त्ता हैं।। ११।।

जिसका जो जैसा होना जो केवलज्ञानी ने जाना।
उसका वह वैसा होगा, न होय किसी का मनमाना।।
यद्यपि हम अपने परिणामों के कर्त्ता हैं उत्पादक हैं।
फेरफार कर सकें नहीं रे हम तो केवल ज्ञायक हैं।। १२।।

भूतकाल की वर्तमान की अर भविष्य की जाने जो।
तीनलोक की तीनकाल की सारी बातें जाने जो।।
वे ही हैं सर्वज्ञ और उनको ही जिनवर कहते हैं।
जिनवर की वाणी जिनवाणी उसको आगम कहते हैं।। १३।।

जिनवाणी में कदम-कदम पर ऐसी बातें आई हैं।
समोशरण में दिव्यध्वनि में जिनवर ने बतलाई हैं।।
उनमें शंका आशंका को है कोई अवकाश नहीं।
किसी तरह की मीन-मेख का इसमें कोई काम नहीं।। १४।।

अरे द्वारिका नगरी होगी भस्म आग की लपटों से।
नेमिनाथ ने बता दिया था बारह वर्षों पहले से।।
उसको नहीं बचा पाये थे सभी द्वारिका के दिग्गज।
अर्द्धचक्रवर्ती नारायण श्रीकृष्ण-से शक्तिपुरुष।। १५।।

आदिनाथ ने भरी सभा में बता दिया सारे जग को।
मारीच महावीर होगा रे कोटि-कोटि सागर पहले।।
इसका तो निष्कर्ष यही सब पहले से ही नियमित था।
कोटि-कोटि सागर पहले से सब घटनाक्रम निश्चित था।। १६।।

अरे पुराणों में पग-पग पर भरी पड़ी ऐसी बातें।
जिनसे यह साबित होता है आगे-पीछे सब निश्चित।।
इसमें शंका-आशंका को है कोई स्थान नहीं।
सबकुछ पहले से नक्की है जग को कुछ भी भान नहीं।। १७।।

तीर्थंकर चौबीस होंय अर चक्रवर्ती बारह होते।
नारायण-प्रतिनारायण बलभद्र आदि नौ-नौ होते।।
यह भी तो सब लिखा हुआ है कौन कहाँ कब-कब होंगे।
परिवर्तन की बात नहीं है जहाँ-जहाँ जब-जब होंगे।। १८।।

दश कोड़ाकोड़ी सागर तक कौन कहाँ कब क्या होगा।
आगामी चौबीसी में तीर्थंकर कौन-कौन होगा।।
इन सबकी पूरी नामावलि जिन आगम में आई है।
सौ इन्द्रों की उपस्थिति में केवलि ने बतलाई है।। १९।।

जिसका जहाँ और जब जैसा जो कुछ होने वाला है।
उसका वहाँ वही सब होगा नहीं बदलने वाला है।।
उसको इन्द्र-जिनेन्द्र कोई भी कभी बदल न पावेंगे।
जो मानेंगे वे ज्ञानी अज्ञानी मान न पावेंगे।। २०।।

कार्तिकेय अनुप्रेक्षा में यह साफ-साफ ही बात कही।
कदम-कदम पर जिन आगम में ऐसी बातें कही गईं।।
उनसे सहज सिद्ध होता सब पर्यायें क्रमनियमित हैं।
आगे कब क्या कैसा होगा सब ही बातें निश्चित हैं।। २१।।

यदि न मानें इन बातों को आगम में शंका होगी।
यदि आगम को भी न मानें सारी बात खतम होगी।।
जिनदर्शन का राजमहल तो आगम पर है टिका हुआ।
आगम पर शंका करने पर जिनदर्शन का क्या होगा?।। २२ ।।

वीतराग सर्वज्ञ प्रभु की वाणी ही जिन आगम है।
आगम के अनुसार हमारे गुरुओं का भी जीवन है।।
आगम में शंका होने पर तीनों पर शंका होगी।
देव-शास्त्र-गुरु सर्वोपरि हैं इसमें आशंका होगी।। २३।।

जिन आगम को आगे रखकर क्या-क्या जाना है हमने।
जिन आगम आधार बनाकर क्या-क्या माना है हमने।।
एक बार गंभीर भाव से इसपर भी सोचो भाई!।
यह भी है गंभीर बात जो बात सामने है आई।। २४।।

छह महिना अर आठ समय में छह सौ आठ जीव भाई।
नितनिगोद से निकलेंगे अर इतने ही शिवपुर जाई।।
यह भी बात पूर्णतः पक्की इसमें कोई फेर नहीं।
अधिक नहीं जा सकते हैं अर कम भी न जाये भाई।। २५।।

सभी गति के सब जीवों की संख्या भी निश्चित भाई।
वह भी कम-बढ़ हो न सकेगी कोई कुछ करले भाई।।
स्वर्ग-नरक के सब जीवों की संख्या निश्चित होती है।
उसमें बदलाबदली भाई कभी नहीं हो सकती है।। २६।।

बदलाबदली होय कभी न – यह अनन्त सुखदायी है।
परिवर्तन की बात सोचना ही अनन्त दुखदायी है।।
परिवर्तन का भाव छोड़ यह परम सत्य स्वीकार करो।
जो कुछ जब जैसा होना सब उसको अंगीकार करो।। २७।।

अंगीकृत यह परम सत्य सुख-शान्ति लायेगा जीवन में।
आकुलता होगी सहज दूर आनन्द आयेगा जीवन में।।
आनन्द आयेगा जीवन में समभाव आयेगा जीवन में।
अरे अतीन्द्रिय ज्ञान और आनन्द आयेगा जीवन में।। २८।।

पर्यायों के परिवर्तन की क्रमिक व्यवस्था अद्भुत है।
क्रम भी तो नियमित है यह अद्भुत से भी अद्भुत है।।
क्रम से है अर क्रम नियमित है हमें नहीं कुछ करना है।
हम अपने में ही रहें सहज बस सहजभाव से रहना है।। २९।।

यद्यपि कुछ करना नहीं हमें पर पूरी बात समझना है।
अर पूरी बात समझकर भाई ज्ञाता-दृष्टा रहना है।।
अरे आत्मा का स्वभाव तो ज्ञाता-दृष्टा रहना है।
करने-धरने के विकल्प न पर में हमें उलझना है।। ३०।।

पर में तो नहीं उलझना है न पर में जमना-रमना है।
यदि सहज जानना हो जावे तो ज्ञाता-दृष्टा रहना है।।
यद्यपि अपनी पर्यायों के कर्त्ता-धर्त्ता हम होते हैं।
पर उनमें अपनी मर्जी से कुछ भी तो नहिं कर सकते हैं।। ३१।।

कुछ भी तो नहिं कर सकते हैं जो नियमित क्रम में होता है।
उसके ही कर्त्ता कहलाते उसके ही कर्त्ता होते हैं।।
ऐसे कर्त्ता कहलाने में है हमें कोई उत्साह नहीं।
हमें कोई रस नहीं अरे हमको अब कोई चाह नहीं।। ३२।।

इच्छानुसार कुछ नहीं होता – यह बात समझ में है आई।
इसको ही कर्त्ता कहते हैं अर यही अकर्त्ता है भाई।।
तद्रूप परिणमित होते हैं इससे कर्त्ता कहलाते हैं।
कुछ फेर-फार कर सके नहीं इसलिये अकर्त्ता हैं भाई।। ३३।।

एक बार गहराई से यह तथ्य समझ में आ जावे।
एक बार गहराई से यह सत्य समझ में आ जावे।।
एक बार चिन्तन की धारा इसी दिशा में मुड़ जावे।
एक बार श्रद्धान हमारा इस धारा में जुड़ जावे।। ३४।।

एक बार जीवनधारा भी इसी दिशा में जुड़ जावे।
जहाँ जा रहे थे अबतक अब मार्ग हमारा मुड़ जावे।।
करने-धरने का बोझ हमारे सिर से पूर्ण उतर जावे।
और सहजता इस जीवन में सहजभाव से आ जावे।। ३५।।

सहजभाव से ज्ञाता–दृष्टा रहना ही है धर्म यहाँ।
और नहीं कुछ करना है बस एकमात्र यह कर्म यहाँ।।
सहज भाव ही जीवन धन है यह ही आतम धर्म यहाँ।
धर्म कर्म है जो कुछ भी यह जिनदर्शन का मर्म यहाँ।। ३६।।

हमें नहीं कुछ करना है – यह बात समझ में नहिं आती।
हमें नहीं कुछ करना है – यह बात चित्त को नहिं भाती।।
अरे हाथ पर हाथ रखे हम कैसे बैठे रह सकते?।
इस हलचल वाली दुनियाँ में हम चुप कैसे रह सकते?।। ३७।।

हम रहते थोड़ी देर शान्त तो चित्त मचलने लगता है।
हम निर्विकल्प निष्काम रहें तो भाव बदलने लगता है।।
तुम तो कहते कुछ करो नहीं पर किये बिना होगा कैसे?
तुम कहते आतमराम भजो[१] पर भजे बिना होगा कैसे?।। ३८।।

भजना भी तो करना है आखिर तुम करने पर आये।
न करना कहते रहे किन्तु आखिर हम करते ही आये।।
हम बहुत सोचते हैं भाई आखिर 'न करना' हो कैसे?।
है प्रश्न हमारा तुम से ही 'न करना' करना हो कैसे?।। ३९।।

दुनियाँ भर का बोझा अपने माथे पर लेकर चलना।
जबकि अपने हाथ नहीं है कुछ भी तो करना–धरना।।
बिना प्रयोजन उलझे रहना अर विकल्प करते रहना।
जिसमें कोई सार नहीं है उनमें ही उलझे रहना।। ४०।।

१. आत्मा का ध्यान करो।

मैं करता हूँ कर सकता हूँ – ऐसा तुमने अब तक माना।
मैं ही तो कर्त्ता-धर्त्ता हूँ – ऐसा तुमने अब तक जाना।।
जो कुछ भी बन सका खूब करके देखा जाना-माना।
क्या कर पाये अब तक हे भाई अपने मन का मनमाना।। ४१।।

लाख बात में एक बात तेरे मन के अनुकूल हुई।
पर अनेक बातें हैं जो तेरे मन के प्रतिकूल हुईं।।
अनुकूल का कर्त्ता बनना प्रतिकूल की बात नहीं।
यह कैसा है न्याय कि इसमें तो कोई अनुपात नहीं।। ४२।।

अपनी क्रमनियमित पर्यायें भी यद्यपि तुम ही करते हो।
जो कुछ क्रम में होना नक्की उसके ही कर्त्ता-धर्त्ता हो।।
पर के कर्त्ता तुम नहीं किन्तु अपने कर्त्ता तो हो ही तुम।
होनेवाले परिवर्तन के तुम ही तो कर्त्ता-धर्त्ता हो।। ४३।।

कर्त्तापन से तो नहीं, बन्धु कर्त्तापन का यह बोझा तो।
है तुम पर नहीं – जानना है, जिससे उतरे यह बोझा तो।।
इस बोझे से तुम मुक्त रहो – हम तो बस यही चाहते हैं।
तुम गहराई से सोचो तो बस हम तो यही चाहते हैं।। ४४।।

अबतक हम यही समझते थे मति के अनुसार गति होती।
पर अब तो ऐसा लगता है गति के अनुसार मति होती।।
जब तीन-तीन भव आगे के दिख जाते हैं भवि जीवों को।
इसका मतलब है साफ कि भव तो पहले से ही नक्की हैं।। ४५।।

जिस भव में हमको जाना है उसके अनुसार भाव होंगे।
भाव भवों से बंधे हुये भव भी बंधते हैं भावों से।।
यदि दो तरफा ही बंधन है तो वह निश्चित ही नक्की है।
भावों का होना भव होना – यह बात एकदम पक्की है।। ४६।।

भव पहले से ही नक्की है भावों को तो अब होना है।
भव के अनुकूल भाव होवें – यह बात जरूरी होना है।।
जब पता नहीं है कि हमको आखिर किस भव में जाना है।
और वहाँ जाने को अब कैसे भावों को करना है।। ४७।।

सब होगा सहज अरे इसमें चिन्ता न आपको करनी है।
करना-धरना कुछ नहीं बन्धु जो होना है सो नक्की है।।
तुम को तो अपने जीवन में बस सहज एकदम रहना है।
जानो-देखो जानो-देखो बस सहज जानते रहना है।। ४८।।

बस सहज जानते रहना है बस सहज देखते रहना है।
आतम का तो बस काम यही ज्ञाता-दृष्टा ही रहना है।।
बस ज्ञाता-दृष्टा रहना ही है आत्मध्यान का रूप यही।
बस आतम में जमना-रमना है आत्मध्यान का रूप सही।। ४९।।

यह ही है असली ध्यान इसी से केवलज्ञान उपजता है।
इससे ही शान्ति प्राप्त होती इससे आनन्द बरसता है।।
मोक्षमार्ग में चलने वाले यही निरन्तर करते हैं।
इससे ही मुक्ति मिलती है जहँ नंतकाल तक रहते हैं।। ५०।।

क्रम नियमित पर्यायों की यह चर्चा अजब निराली है।
जो समझेंगे भव्य उन्हें यह मुक्ति दिलाने वाली है।।
जिनका अनन्त संसार शेष उनको स्वीकार नहीं होगी।
यह परम सत्य है बात किन्तु स्वीकृत स्वकाल में ही होती।। ५१।।

जिनका अनन्त संसार शेष उनको स्वीकार नहीं होगी।
ऐसा कहकर उन लोगों की निन्दा क्यों करते हो भाई।।
जो नहीं आपकी बात सुने उनकी निन्दा तो ठीक नहीं।
समझाना है तो समझाओ पर ऐसा कहना ठीक नहीं।। ५२।।

जिनको भव-भव में रुलना है उनको स्वीकार नहीं होती।
जिनका अनन्त संसार शेष उनको स्वीकार नहीं होती।।
यह निन्दा के हैं वचन नहीं, है वस्तु तत्त्व का प्रतिपादन।
परमागम में किया गया इस अटल तथ्य का उद्घाटन।। ५३।।

हम तो उसको ही बता रहे निन्दा का कोई भाव नहीं।
ऐसा क्यों? ऐसे प्रश्नों का हे भाई! कोई जवाब नहीं।।
वस्तु के स्वभाव में भाई कोई तर्क नहीं चलता।[१]
और दूसरी वस्तु का कोई अधिकार नहीं चलता।। ५४।।

सब भावों को पर्यायों को देखो-जानो देखो-जानो।
कोई विकल्प मत करो सहज देखो-जानो देखो-जानो।।
इसमें भी कुछ करो नहीं बस सहज जानना होने दो।
कुछ भी कोशिश मत करो परन्तु सहज जानना होने दो।। ५५।।

१. 'स्वभावोऽतर्कगोचरः' : समन्तभद्राचार्य : आप्तमीमांसा, श्लोक-१००

निन्दा की बातें मत सोचो जो बता रहे उसको जानो।
राग-द्वेष से ऊपर उठ अपने स्वरूप को पहिचानो।।
यद्यपि सब जीव एक से हैं पर पर्यायें हैं जुदी-जुदी।
वे सब स्वकाल में होती हैं मर्यादायें हैं जुदी-जुदी।। ५६।।

छह महीना अर आठ समय में छह सौ आठ मोक्ष जाते।
सबके मुक्ति में जाने के लगभग समय भिन्न होते।।
हमको जाने की जल्दी है तो कुछ उपाय करना होगा।
जैसे भी हो मुक्तिरमा का शीघ्र वरण करना होगा।। ५७।।

ऐसा ही जिसका चिन्तन उसको स्वकाल स्वीकार नहीं।
उसको भव-भव में रुलना है जिसको स्वकाल स्वीकार नहीं।।
जब स्वकाल होगा तब उसको सहज सहजता आवेगी।
क्रमनियमित पर्यायों की श्रद्धा उसको हो जावेगी।। ५८।।

यह पहले से ही नक्की था तीर्थंकर महापद्म होंगे।
पर उसके पहले नरक गति में श्रेणिक को जाना होगा।।
जो होना है सो तदनुसार कर्मों का बंधन यथासमय।
हो जावेगा, पर होगा न कोई परिवर्तन किसी समय।। ५९।।

इन बातों का जब पता चला समदृष्टि राजा श्रेणिक को।
तो सहजभाव से सभी विषय स्वीकार हो गये हैं उनको।।
यह है क्रमनियमित पर्यायों की स्वीकृति रे सच्चे मन से।
यह ही है सम्यग्ज्ञान और यह ही है सम्यग्दर्शन से।। ६०।।

राजा श्रेणिक अर प्रथम नरक, श्री महापद्म तीर्थंकर की।
तीनों क्रमनियमित पर्यायें तो अनादिकाल से नक्की थीं।।
तीनों में कुछ अदलाबदली ना किसी रूप में संभव थी।
इस महासत्य की सहजभाव से सहज स्वीकृति पक्की थी।। ६१।।

इस सहज स्वीकृति का पक्कापन जीवन की आधारशिला।
इसके बिना सहज जीवन को ना जीवन आधार मिला।।
दृढ़ श्रद्धा दृढ़ ज्ञान और दृढ़ चर्या के आधार बिना।
आनन्दमयी दृढ़ जीवन का रे ना कोई आधार बने।। ६२।।

यदि होना है निश्चिन्त पूर्ण तो क्रमनियमित पर्यायों को।
आदिकाल से नंतकाल तक नियमित ही जानो-मानों।
परिवर्तन करने के भार से अपने को नित मुक्त रखो।
अर अपने उपयोग योग को अपने में संयुक्त रखो।। ६३।।

सहज सरल जीवनधारा को सहज सरल ही रहने दो।
अमृतमय जीवन सरिता को सहज तरल ही बहने दो।।
लहरें उठें सहज उठने दो तरल तरंगित रहने दो।
जितना उछले यह ज्ञानोदधि उतना उसे उछलने दो।। ६४।।

उसे नियंत्रित करने का ना यत्न करो न सोचो ही।
कुछ विकल्प मत करो बन्धुवर उसको खूब उछलने दो।।
अरे उछलकर कहाँ जायेगा अपनी सीमा के बाहर।
अपनी सीमा में सीमित वह सचमुच ही सीमन्धर है।। ६५।।

सभी बंधे हैं अपनी-अपनी क्रमनियमित पर्यायों में।
एक-एक पर्याय बंधी है अपने क्षण अपने क्रम में।।
एक समय पहले या पीछे कोई नहीं कर सकता है।
यह अज्ञानी जगत व्यर्थ में ही तो स्वयं उलझता है।। ६६।।

अरे आज तक क्या कर पाया और अभी क्या कर लोगे?
एक बार तुम सोचो तो क्या किया और क्या कर लोगे?
अबतक असैनि पर्यायों में ही काल अनन्त बिताया है।
और भावि में सिद्धदशा में भी तो कुछ नहीं करना है।। ६७।।

थोड़ा सा यह काल मिला है इसमें क्यों विकल्प करते?।
क्रमनियमितता पर्यायों की क्यों स्वीकार नहीं करते?।।
यदि होनहार होगी हे भाई! काल निकट आया होगा।
इस परम सत्य की स्वीकृति का सम्यक्पुरुषार्थ जगा होगा।। ६८।।

सम्यक् निमित्त तो हाजिर ही है सुनने का अवसर आया।
हर कीमत पर इसे समझने का सद्भाव तुम्हें आया।।
लगता है सद्भाग्य तुम्हारा अब आने ही वाला है।
अब तुमको भी परमसत्य यह स्वीकृत होनेवाला है।। ६९।।

हैं प्रश्न तुम्हारे सहज सरल जिज्ञासा प्रस्तुत करते हैं।
तत्त्वज्ञों में समझाने का भाव जागृत करते हैं।
विनयपूर्वक सच्चे दिल से कान लगाकर सुनते हों।
अर संबंधित विषय वस्तु का चिन्तन करते रहते हो।। ७०।।

वृत्ति और प्रवृत्ति तुम्हारी संगति करने लायक है।
साधर्मी वात्सल्य तुम्हारा अपनाने के लायक है।।
रहन–सहन अर खान–पान भी सात्विक और अहिंसक है।
भव्यों जैसा भव्य आचरण भवि सन्मार्ग प्रदर्शक है।। ७१।।

इससे लगता है अतिशीघ्र तुम तत्त्व समझने वाले हो।
क्रमनियमित पर्यायों का भी मर्म समझने वाले हो।।
इस महासत्य को स्वीकृत कर सम्यकपथ पाने वाले हो।
अधिक कहें क्या कुछ भव में मुक्ति में जाने वाले हो।। ७२।।

जिनका संसार शेष होता उनको यह बात अखरती है।
कितना भी समझाव उन्हें उनको यह बात न जँचती है।।
उनसे कुछ बात करो भाई तो गला पकड़ने लगते हैं।
अर बात–बात पर आपस में वे स्वयं झगड़ने लगते हैं।। ७३।।

उनसे कुछ बातें करने से या उनकी बातें सुनने से।
कुछ लाभ न होने वाला है इस सबमें व्यर्थ उलझने से।।
हमको तो निर्णय करना है आगे कब क्या होगा कैसे?।
जिनवाणी में जो बतलाया उसकी तह में जाना कैसे?।। ७४।।

आगे का सब कुछ निश्चित है केवलज्ञानी ने जाना है।
यह बात एकदम परम सत्य हमने भी तो यह माना है।।
इस परम सत्य को स्वीकृत कर बस सहज जानते रहना है।
यह सहज भाव ही जीवन है जिनवाणी का यह कहना है।। ७५।।

'भावी पर्यायें भी नियमित' हम ऐसा माने नहीं किन्तु।
निज आतम का ही ज्ञान-ध्यान एवं पूरा श्रद्धान करें।।
देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति अर जिनवाणी का श्रवण-मनन।
सदाचारमय जीवन एवं खान-पान का ध्यान रखें।। ७६।।

इसमें क्या है कमी अरे हम भी आतम के साधक हैं।
मुक्तिमार्ग के पथिक और हम आतम के आराधक हैं।।
शक्ति के अनुसार व्रतादिक पालें एवं दान करें।
उपवासादिक करें और आखिर मुक्ति का वरण करें।। ७७।।

यह सब तो है ठीक किन्तु क्रमनियमितपर्यायों को।
यदि मानोगे नहीं धर्म का मर्म समझ न पावोगे।।
ढोते रहना अरे निरन्तर कर्त्तापन के बोझे को।
प्राप्त नहीं कर पावोगे तुम आतम के सच्चे सुख को।। ७८।।

कर सकते कुछ नहीं किन्तु करने का बोझा माथे पर।
रखकर विकल्प करते रहना रोते रहना तुम जीवनभर।।
सदाचारमय जीवन से तुम स्वर्ग संपदा पा लोगे।
पर कर्त्तापन का बोझ उतारे बिना मुक्ति ना पावोगे।। ७९।।

लगता है भाई अभी किनारा भवसागर का पास नहीं।
भवसागर के नंत दुखों का तुम्हें रंच आभास नहीं।।
एक बार गंभीर भाव से सोचो और विचारो तो।
क्रमनियमित पर्यायों का यह परमसत्य स्वीकारो तो।। ८०।।

क्रमनियमित पर्यायों का स्वीकार परम सुखदायक है।
और अकर्त्ताभाव बन्धुवर भवदुःखों का नाशक है।।
अरे अकर्त्ताभाव अनाकुल मुक्ति रमा का भाई है।
उसकी भगनी यह मुक्तिरमा बस तुमको लेने आई है।। ८१।।

चक्रवर्ती की कन्या तुमको तिलक लगाने आई है।
मुँह मत फेरो अरे बन्धुवर तुमको वरने आई है।।
अरे अरे सद्भाग्य तुम्हारे पर हमको ईर्ष्या होती।
इस पर भी तुम इठलाते हो तुमको कुछ प्रज्ञा[१] होती।। ८२।।

एक बार अवसर आता है उसे चूकना योग्य नहीं।
अरे उपेक्षाभाव तुम्हारा इस अवसर के योग्य नहीं।।
अगर नहीं स्वीकार तुम्हें तो तुम पर हम क्यों रोष करें।
होनहार ही ऐसी होगी – यही मान सन्तोष करें।। ८३।।

अरे जानना सहज भाव से है इतना आसान नहीं।
जाने अर उद्वेलित न हो – यह इतना आसान नहीं।।
अरे अप्रभावित रह जाने और जानकर भी भाई।
अरे प्रभावित होंय नहीं यह ही है सहजभाव भाई।। ८४।।

जानें बस केवल जाने, पर प्रतिक्रिया कुछ भी न हो।
जाने पर बस रहे जानता रंचमात्र असहज न हो।।
असहज न हो विचलित न हो आकुल-व्याकुल भी न हो।
शान्त निराकुल रहे – अरे बस यही सहज जानना है।। ८५।।

१. अकल

सहज जानना धर्मध्यान है सहज जानना सामायिक।
सहज जानना स्वाध्याय यह काम नहीं है सामाजिक।।
यह संवर है निर्जरा अरे यह तो है सच्चा मुक्तीमग।
यह तो है शुद्धभाव भाई यह सही दिशा में उठता पग।। ८६।।

यह अत्यन्त सरल है किन्तु अनभ्यास से है दुर्लभ।
रुचिपूर्वक अभ्यास करे तो जानो यह अत्यन्त सुलभ।।
'दुर्लभ है या सुलभ' अरे इस चिन्तन से कुछ लाभ नहीं।
जिनको चलना है इस मग पर क्या उनको व्यर्थ प्रलाप नहीं?।। ८७।।

सुलभ होय अथवा अतिदुर्लभ हमको जब करना ही है।
तब इसका विचार क्या करना हमको तो करना ही है।।
तन से मन से कैसे भी हो तुम पक्का निश्चय कर लो।
हो जावो तैयार बन्धुवर इसके लिये कमर कस लो।। ८८।।

सहज जानना सहज जानना सहज जानना ही तप है।
है इसमें कोई कष्ट नहीं न आकुलता न आतप है।।
है शान्त शान्त रे अरे शान्त है रंचमात्र संताप नहीं।
रे परमशान्त इस शान्तदशा में ताप नहीं आताप नहीं।। ८९।।

ज्ञानमयी आनन्दमयी सर में सरिता में सागर में।
सहज जानने की प्रवृत्ति जहँ देखो वही उजागर मैं।।
मैं मैं मैं ही नित भास रहा मैं व्याप रहा अपनेपन में।
मैं व्याप रहा मैं भास रहा बस मैं ही अपने जीवन में।। ९०।।

जो ज्ञेय अनादि सुनिश्चित हैं वे सहज जानने में आते।
पलटापलटी का भाव नहीं वे सहज सहज जाने जाते।।
जो निश्चित हैं वे सब जाने पर सहज सहजता भंग न हो।
रे सहज सहजता खण्डित हो ऐसा कोई परसंग[1] न हो।। ९१।।

सहज सहजता मुनिधर्म अर सहज सहजता श्रेणी है।
अरे सहजता वैसी है जैसी मस्तक पर वेणी[2] है।।
प्रत्येक द्रव्य की सहज परिणति उसकी गौरव गाथा है।
सहज जानना वैसा है जैसा शरीर पर माथा है।। ९२।।

इस दुनियाँ में नित्य निरंतर कुछ-न-कुछ होता रहता।
दुर्घटनायें घटनायें भी जगह-जगह होती रहतीं।।
रे आँधी तूफान निरन्तर आया-जाया करते हैं।
जिनमें लाखों जीव-जन्तु यों ही मर जाया करते हैं।। ९३।।

जीव जीव को खा जाते हैं क्या-क्या पाप नहीं होते।
सर्दी-गर्मी जीना-मरना रे नित्य लगे ही हैं रहते।।
इनकी सबकी प्रतिक्रियायें साधक पर न होती हैं।
वे तो इन सब बातों को भी सहज जानते रहते हैं।। ९४।।

जो जग में होता रहता है सभी जानते हैं भगवन।
पर उनके सुखसागर में तो कभी नहीं होती अड़चन।।
उस आनन्द महोदधि में आनन्द घुमड़ता रहता है।
रे परमातम के अन्तर में आनन्द उमड़ता रहता है।। ९५।।

---

१. प्रसंग २. जूड़ा

अपने सिर का बोझ उतारो तुम्हें नहीं कुछ करना है।
क्रमनियमितता की नौका से भवदधि पार उतरना है।।
क्रमनियमितता की सच्चाई सच्चे दिल से स्वीकार करो।
उसको अपनाकर जीवन में इस भवसागर को पार करो।। ९६।।

श्रद्धा के लेवल पर तुमको जब महा सत्य स्वीकृत होगा।
तुमको इस लौकिक जीवन में हलकेपन का अनुभव होगा।।
चिंता की रेखाओं के बल ढीले होंगे फीके होंगे।
चिन्ता बदलेगी चिन्तन में अर रोम-रोम पुलकित होंगे।। ९७।।

आनन्द महोदधि उमड़ेगा श्रद्धा के बादल गरजेंगे।
अनुभव की बिजली चमकेगी रिम-झिम रिम-झिम घन बरसेंगे।।
समकित का सावन आवेगा अन्तरमन आनन्दित होगा।
शिवमारग की पगडण्डी पर धीरे-धीरे चलना होगा।। ९८।।

जिनका क्षयोपशम होगा एवं ज्ञेय सुनिश्चित जो होंगे।
सहज ज्ञानमय आतम उनको सहजभाव से जानेंगे।।
सहजभाव से सहजज्ञान में सहज सहजता आवेगी।
तब उसकी गौरव गरिमा भी जीवन में छा जावेगी।। ९९।।

सहजभाव से निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान प्रगट होंगे।
प्रगटेगा चारित्र आतमा में जमने से रमने से।।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित्र जब परमारथ से प्रगटेंगे।
और पूर्णता को पाकर हम मुक्तिरमा से परणेंगे।। १००।।

(दोहा)

क्रमनियमित पर्याय का चिन्तन विविध प्रकार।
इसप्रकार पूरा हुआ जिनदर्शन का सार।। १०१।।
महावीर का जन्मदिन दो हजार उन्नीस।
शुक्ला चैत्र त्रयोदशी पूर्ण हुआ जगदीश।। १०२।।